© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

प्रवास और महिला आकांक्षा

नेहा राय
डी. फिल छात्र
गोविन्द बल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान,
झूंसी, इलाहबाद

सार –संक्षेप

संस्कृतियों के निर्माण और रूपांतरण को प्रवास प्रभावित करता है| भारत के जनगणना 2011 के अनुसार भारत की लगभग 30 प्रतिशत जनसँख्या आतंरिक प्रवास में शामिल है| आतंरिक प्रवासन के लिए आर्थिक कारण के साथ साथ सामाजिक संरचना और अन्य सांस्कृतिक निर्मितियां भी जिम्मेदार है| स्त्री –पुरुष जाति- भेद, पितृसत्ता, गरीबी से मुक्ति के लिए यहाँ से वहां जाते है| समाज विज्ञानियों ने इस पर काम किया है | क्लासिकल सिद्धांत प्रवास ऐच्छिक प्रक्रिया बताते है किन्तु स्त्रियों के सन्दर्भ में यह हमेशा सही साबित नही होता| पुरुष प्रधान समाज होने के कारण प्रवास का निर्णय , उसका प्रारूप सब पुरुष द्वारा ही निर्धारित होता है| अतः पितृसत्ता का प्रभाव प्रवास की प्रक्रिया में भी पाया जाता हैजिसमे स्त्रियों को सीमांत समझा जाता है और उन्हें पुरुष का अनुगामी ही समझा जाता है| प्रवास की प्रक्रिया में स्त्रियाँ पति के जाने के बाद घर के साथ सार्वजनिक जीवन की जिम्मेदारियां उठाती है और पति के लौट आने के बाद उनके साथ सामंजस्य भी बैठाती है|

इन स्त्रियों की अपनी कुछ आकांक्षाएं होती है जिन्हें पूरा करने के लिए वे अपने व्यक्तिगत और सार्वजनिक वृत्त में प्राप्त करने का प्रयास करती है| इस प्रयास के दैनिक अनुभवों को दर्ज करना इस अध्ययन का उद्देश्य जय जिसको अभी तक के अर्थशास्त्रीय बौद्धिक में अनदेखा किया गया है| इसे समझने के लिए मैंने उत्तेर प्रदेश के आजमगढ़ जिले की स्त्रियों की अन्दुरुनी दुनिया की पड़ताल की है जहां प्रवसन एक भिन्न रूप में घटता है| इस अध्ययन में मैंने सवर्ण और दलित दोनों जातिके स्त्रियों की अभिलाषा, संघर्ष और अकेलेपन को समझने की कोशिश की है जिनके पति रोजगार की तलाश में दूर शहर चले जाते है और गाँवों में ही छूट गयी है|

मुख्य शब्द - विकास प्रवास महिला आकांक्षा पितृसत्ता|

शोध –पत्र

मनुष्य के जन्म के साथ ही उसके के प्रवास का भी इतिहास जुड़ा है जितनी पुरानी मानवता है उतनी ही पुराना जनसंख्या प्रवास का इतिहास है| जनसँख्या परिवर्तन में जन्म और मृत्यु के कारको के अलावा प्रवास का भी बहुत बड़ा योगदान होता है| किसी भी क्षेत्र में व्यक्तियों के आगमन और निगमन का बहुत प्रभाव पड़ता है| प्रवास मूल और गंतव्य दोनों स्थानों की संस्कृतियों को प्रभावित करता है| मनुष्य जिस स्थान को छोड़ता है वहाँ के ज्ञान, संस्कृति, सभ्यता आदि को अपने साथ ले जाता है और गंतव्य स्थान पर उनका प्रसार सुरक्षा करता है|[1] प्रवासी व्यक्ति के लिए संस्कृति एक संबल होती है जो उसे अपनी संघर्षमय स्थिति में जीवंत बनाये रखती है और वहा के संस्कृतियों के साथ सामंजस्य भी बिठाने में सहायक होती है| जब वह गंतव्य स्थान से मूल स्थान पर लौटता है तो नई संस्कृतियों को अपने मूल स्थान में भी प्रसार करता है इस तरह से प्रवास संस्कृति प्रसार का भी कार्य करता है| अतः प्रवास का प्रभाव बहुत प्रबल होता है, व्यक्ति के साथ साथ मूल व गन्तव्य स्थान तीनो ही प्रभावित होते है|

[1] Mazoomder. M. 2010

प्रवास के लिए केवल आर्थिक कारण ही जिम्मेदार नही है जैसा कि अभी तक के समाज विज्ञानियों ने बताया है[2], आर्थिक कारक के साथ-साथ प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक कारक भी है जैसे सामाजिक प्रथायें, जाति-प्रथा, पितृसत्ता से मुक्ति की चाह, धार्मिक संकट आदि| स्त्रियों के प्रवास के लिए विवाह एक सशक्त सांस्कृतिक कारक माना जाता है| भारतीय समाज में विवाहोपरांत स्त्रियाँ अपने माता- पिता के घर से पति के घर के लिए प्रवास करती है| विवाह प्रवास का विकर्षण (push factor) कारक है जिसमे स्त्रियों की इच्छा शामिल नही होती है और परिवार के द्वारा लड़की का विवाह तय कर दिया जाता है| प्रवास को सामाजिक विभाजन के रूप में देखे तो यह वर्गों की जरूरत के अनुसार निम्न और उच्च वर्गो में बंटा हुआ है जहां निम्न जाति के लोगो में प्रवास जाति भेद से मुक्ति के लिए है जैसा कि गोपाल गुरु[3] ने अपने एक लेख में आंबेडकर के खंडित आदमी सिद्धांत (ब्रोकन मैन) का प्रयोग करते हुए कहा है कि "दलितों के लिए गाँव कसाईखाने जैसे है जहां उन्हें अपने जाति के लिए हमेशा बलि देनी पड़ी है"| जब दलितों को मुख्य गाँव से बाहर कर दिया गया था क्योकि उच्च जाति के लोग उनकी उपस्थिति को प्रदूषणकारी मानते थे| यह अलग बात है कि शहर में भी उन्हें सीमांत कर दिया गया| निम्न जाति के समुदाय के पास चल और अचल सम्पत्ति दोनों की कमी रहती है अतः रोजगार की तलाश में वे शहर की ओर प्रवासित होते है| पिछले तीन चार दशको से विकासशील देशो में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरो के लिए प्रवास में तीव्रता पाई जाती है जिससे नगरीकरण की प्रक्रिया में भी तेजी आयी है| दिन- प्रतिदिन बढ़ते हुए उद्योग और व्यापार के विकास और जन संचार के संसाधनों के माध्यम से बढती जागरूकता के कारण गावं के गरीब किसान और युवा गाँव से शहर की ओर अपना जीवन स्तर सुधारने की आकांक्षा और मूलभूत आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए प्रवास कर रहे है| कहीं ना कहीं उनके मन में शहर की चकाचौंध और वहां की भौतिक सुख सुविधाये उन्हें प्रवसन के लिए प्रेरित करती है|[4] आजादी के बाद सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रो के विकास के लिए बहुत सारी विकास की परियोजनायें चलायी किन्तु सही रूप से कार्यान्वयन नहीं होने के कारण कृषि की घटती उत्पादकता,उर्वरकता और कम लाभ देने वाली खेती, बेरोजगारी व कम मजदूरी से लोग शहरो की ओर में प्रवसित होते है[5] जहाँ असंगठित क्षत्रो में जैसे सुरक्षा गार्ड,टैक्सी ड्राईवर और रिक्शा चालक और कुली का कार्य करते है| इसके विपरीत उच्च वर्ग जो कुशल और आर्थिक रूप से सम्पन्न है वे लोग शिक्षा और बेहतर जीवन की तलाश में प्रवास करते है| उच्च वर्ग में निम्न वर्ग की अपेक्षा अधिक दूरी में प्रवास पाया जाता है[6]| अतः प्रवास एक वैश्विक परिघटना है जो पूरे विश्व में पाई जाती है, जिसका प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति पर अलग-अलग पड़ता है| प्रवास का अध्ययन प्रत्येक विषयों जैसे भूगोल, इतिहास, राजनीति और जनसंख्या विज्ञान के विद्वानो द्वारा इसका अलग अलग दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है| मैने इसे समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखते हुए स्त्रियों के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने का प्रयास किया है| मै कुछ सवालो के जवाब खोजना चाहती हूँ मसलन, उन स्त्रियों पर प्रवास का क्या प्रभाव पड़ता है जिनके पति घर से बाहर रोजगार की तलाश में चले जाते है, स्त्रियों का प्रवास को लेकर उनका क्या दृष्टिकोण है ? वे क्यों मूल स्थान पर छूट जाती है ?, प्रतिदिन के जीवन में उन्हें क्या संघर्ष करना होता है?, क्या प्रवास उनके जीवन दशा को बेहतर बनता है?, प्रवास को लेकर उनकी क्या आकांक्षाये और इच्छाएं रहती है?

प्रवास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-

भारत में प्रवास औपनिवेशिक काल से ही शुरू हो गया था जब ब्रिटिश सरकार ने अपने यहाँ 1830 में गुलाम बनाने को कानूनी रूप से अवैध घोषित कर दिया जिसके कारण ब्रिटिश और यूरोपीय देशो में गन्ना पौधरोपण के लिए श्रमिको की कमी हो गयी थी और जिसके फलस्वरूप भारत से संविदा के आधार पर मजदूर जाने लगे और इस तरह बंधुआ प्रवास की शुरुवात हुई|[7] पश्चिमी बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल, उड़ीसा से अधिकतर लोग जाने लगे. ये लोग 4-5 वर्ष के संविदा पर जाते थे जिसके बदले में इन्हें पैसे या वस्तु के रूप में मजदूरी दी जाती थी लेकिन इनकी

[2] Messey, et. al. (1993), का मानना है कि प्रवास हमेशा उच्च बेरोजगारी की तरफ से निम्न बेरोजगारी वाले स्थान पर होती है और bojaras (2000) का मानना है कि व्यक्ति प्रवास में उन स्थानों को वरीयता देता है जहां उत्पादकता और आय अधिक उच्चतम सीमा तक जाने की सम्भावना रहती है|

[3] गोपाल गुरु. (2013) पृष्ठ सं. 540

[4] Revenstien (1889)

[5] Oberai and Manmohan (1987)

[6] Bongue (2000)

[7] Mazoomder, M. (2010.)

जिंदगी एक संविदा मजदूर के रूप में बध गयी जिसे बंधुआ मजदूर का नया प्रारूप माना जाने लगा[8]| संविदा ख़त्म होने के बाद इनके पास दो विकल्प रहता था या तो वह अपने देश लौट कर चले आये या फिर किसी नए संविदा पर फिर से बंधुआ मजदूर के रूप में काम करे लेकिन अपने देश वापस आने के लिए बहुत ज्यादा धन न होने के कारण ये वही रहने के लिए बाध्य हो जाते थे|

भारत में प्रवास का प्रारम्भिक रूप अंतर्राष्ट्रीय ही था, आंतरिक प्रवास बहुत कम पाया जाता था जिसका एक मात्र कारण भारत का कृषि प्रधान देश होना था, लोगो को अपने गाँव और जमीन से काफी जुड़ाव था| लोग एक गाँव से दुसरे गाँव भी कृषि कारणों से ही जाते थे| 1891 में जनगणना रिपोर्ट के अनुसार 3.8 प्रतिशत ऐसे लोगे पाए गये जो ऐसे राज्य में रह रहे थे जहां पैदा नही हुए थे अर्थात अपने जन्म निवास से अलग स्थान पर रहते थे, यह संख्या 1901 में 3.3, 1911 में 3.6 और 1921 में 3.7 थी|[9] प्रवास प्रक्रिया में केवल पुरुष ही रहते थे| महिलाओ के लिए प्रवास के मतलब केवल विवाह ही होता था जिसमे वे एक गाँव से दुसरे गाँव जाती थी| जनगणना 1981 के अनुसार सबसे पहले आंतरिक प्रवास कलकत्ता ,बंगाल, असाम जैसे राज्यों में देखने को मिला[10]| वहाँ रोजगार के साधन अधिक थे जैसे बंगाल में जूट मिल और असम में चाय बगानें| जैसे -जैसे विकास की गति बढती गयी सड़क, रेल और अन्य यातायात के संसाधन बढ़ने से प्रवास में भी तीव्रता बढती गयी और इन सबने प्रवास की प्रक्रिया में सकारात्मक भूमिका निभाई| जहां सड़क और रेल निर्माण का सकारात्मक प्रभाव पड़ा वहीं कुछ नकारात्मक प्रभाव भी पड़े जिसमे कृषि योग्य भूमि रेल मार्ग बनाने और सड़के चौड़ी करने में चली गयी और शेष कृषि योग्य भूमि सरकार की विकास योजनाये निगल गयी जिससे ग्रामीण लोग भुखमरी, गरीबी, बेरोजगारी बढती गयी और नगरो में इंफ्रास्ट्रक्चर, भौतिक सुख सुविधाओ की भरमार सी होती गयी और गाँवो के लघु उद्योग धंधे चौपट होते गये, जीविका चलाने के लिए वे देश के विभिन्न कोनो में प्रवास करते है और अपने घर की देख-भाल करने और कृषि कार्यो के लिए अपनी पत्नियों पर निर्भर रहते है[11]| जनगणना 2011 के अनुसार भारत में आंतरिक प्रवास की जनसँख्या 309 मिलियन, लगभग सम्पूर्ण जनसँख्या का 30% है और एन.एस.एस.ओ. के अनुसार देश की 28% जनसँख्या आंतरिक प्रवास में शामिल है. उत्तर प्रदेश से बाहर अलग राज्यों में प्रवास करने वाली जनसंख्या 3.8 मिलियन है|[12]

विकसित देशो में प्रवास की एक सामान्य प्रकृति यह है की पुरुष अपने बच्चों और पत्नियों को मूल स्थान पर छोड़कर रोजगार की तलाश में गाँव से बाहर चला जाता है|[13] राज्य सरकारों की भी कोई नीति नही है जिसमे महिलाओं को उनके पति के साथ प्रवसन को बढ़ावा दिया जाये| साऊथ अफ्रीका जैसे देशो में राज्य सरकर इसे रंग भेद नीति की वजह से प्रवसित व्यक्ति के परिवारों के प्रवसन पर रोक लगा दिया था|[14] जब रोजगार में अनिश्चितता रहती है तब भी पुरुष अपने परिवार को साथ नही ले जाना चाहते है| यह भी देखा गया है की जब पुरुष गंतव्य पर स्थायी हो जाता है तभी अपने परिवार को साथ में ले जाने की प्राथमिकता देता है लेकिन यह बात असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले मजदूर वर्ग के लिए बहुत मुश्किल है कि स्थायी रूप से किसी एक जगह रह कर काम कर सके| उच्च वर्ग की स्त्रियों को अपने पति के साथ प्रवास पर रोक लगाई जाती है क्योकि विवाहित स्त्री का कर्त्तव्य अपने पति के परिवार के लोगो की सेवा करनी होती है|

प्रवास के शास्त्रीय सिद्धांत के अनुसार प्रवास एक तार्किक निर्णय है जिसमे कोई भी व्यक्ति गंतव्य स्थानों के सकारात्मक और नकारात्मक तथ्यों को ध्यान में रख कर करता है| हिक्स[15] के अनुसार पूंजी और श्रम के असीमित वितरण के कारण मजदूरी और रहने की सुविधाओ में असमानता आती है जिसके कारण प्रवास को बढ़ावा मिलता है और व्यक्ति उसी जगह के लिय प्रवास करता है जहां उसके अनुकूल रोजगार, मजदूरी और अन्य आर्थिक परिस्थितियाँ रहती है| इस्टार्क और ब्लूम[16] के अनुसार प्रवास सुनियोजित योजना होती है और यह प्रवासी और अप्रवासी दोनों के द्वारा मिलकर लिया जाता है| यह सभी सिद्धांत स्त्रियों के सन्दर्भ में बिल्कुल गलत साबित होता है स्त्रियों के घर से प्रवास

[8] Tinker. (1977)
[9] Ganguly. (2002)
[10] Chattopadhyaay,H. (1987)
[11] Nitya rao.(2012).
[12] Census of India 2001, soft copy. India D series, migration table. Registrar general and Census Commissioner.
[13] Kanaiaupuni S. M. (2000).
[14] Brown (1983).
[15] Hicks, J.R. (1932) p.162
[16] Stark and bloom 1985 p. 174-175.

के निर्णय को पूरी तरह से पुरुष और उसके परिवार पर निर्भर करता है| पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों को सुरक्षा देने की सोच स्त्री की आज़ादी को और खतरे में डाल देती है| आदिकाल से स्त्री की सुरक्षा ही एक मात्र ऐसा कारण है जो स्त्री के स्थान को सार्वजानिक जगह से समेट कर चारदीवारो में बंद कर दिया है| सुरक्षा के कारण से ही पुरुष स्त्रियों पर नियंत्रण लगाने लगे, जिसमे सबसे ज्यादा नियंत्रण स्त्री के प्रजनन क्षमता और यौन संबंधो पर किये जाते है| इसके बदले इन्हें से पैतृक सुरक्षा प्रदान की जाती थी और इस तरह उन्हें एक सुरक्षित और अधीनस्थ जिंदगी जीने के आदत सी हो गयी है| दुसरे अधीनस्थ समुदाय या वर्ग जैसे दलित वर्ग में उनके अपने शोषण के कारण आपसी सहयोग की भावना प्रबल हुई है लेकिन महिलाओं में अभी भी यह कहीं नही पाई जाती है उनमे परम्पराओं को पोषने का विचार उनके अंदर चेतना जगाने के रस्ते में बाधक बना हुआ है|[17] सामान्य तौर पर एक गृहस्थ जीवन जीने वाली महिला अपनी पूरी आकांक्षा और ऊर्जा अपने परिवार और बच्चों पर खर्च कर देनी होती है| वे अपनी इच्छाओं को अपने परिवार और बच्चों से जोड़ कर देखती है, खुद यह तय नही कर पाती कि उसकी अपनी इच्छा क्या है, आकांक्षायें महसूस तो करती है पर व्यक्त नही कर पाती ऐसा इसलिए है कि बचपन से ही लड़की को सामाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा अपनी भावनाओ को दबाने की शिक्षा दी जाती है|[18] प्रवास में भी पति के साथ जाने की अपनी आकांक्षा को व्यक्त नहीं कर पति है और परम्परात्मक स्त्री की तरह वह अपनी भावनाओं पर नियंत्रण करके, पुरुष सत्ता के आगे नत मस्तक होकर, दुसरे (पति, बच्चा) अर्थात पुरुष के इच्छानुसार जिंदगी बिताने के लिए बाध्य होती है और मूल स्थान पर ही छूट जाती है|

अध्ययन क्षेत्र-

आजमगढ़ जनपद उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में तमसा नदी के किनारे गंगा और घाघरा नदी के मध्य बसा हुआ है| इसकी स्थापना विक्रमाजित के मुस्लिम पत्नी के गर्भ से उत्पनं हुए पुत्र राजा आज़म खान के नाम पर 1665 ए.डी. में हुआ था |जनगणना 2001 के अनुसार यह की जनसँख्या 4,613,913 है. मेरा अध्ययन क्षेत्र आजमगढ़ के निजामाबाद तहसील के गाँव चक कमरअली है, निज़ामाबाद तहसील जो कि काले मिटटी के बर्तनों के लिए प्रसिद्ध है जिसमे सिल्वर रंग की उभार देकर बनाया जाता है और जिसे दिसम्बर 2015 भौगोलिक सूचकांक में शामिल किया गया है| मैंने चक कमर अली गाँव को अपना अध्ययन क्षेत्र कुछ कारणों से चुना जैसे यहाँ कई तरह के जातियां[19] निवास करती है| जिसकी जनसख्या 761 है| जिसमे से पुरुष 372 और महिलाओ की जनसंख्या 389 है[20]| यहाँ की मिटटी तो उपजाऊ है किन्तु कम पैदावार होने की वजह से लोगो में कृषि के प्रति मोहभंग हो गया है| निम्न जाति के लोगो के पास कृषि योग्य जमीने नही है फिर भी वो उच्च वर्ग के खेत में काम नहीं करना चाहते है| प्रवास यहाँ से औपनिवेशिक समय से ही पाया जाता रहा है|[21] अभी भी आंतरिक प्रवास का प्रारूप बहुधा मिलता है| इस गाँव में महिलाओं की संख्या ज्यादा है, यह सकारात्मक लिंगानुपात के कारण नही है बल्कि प्रवास के कारण से है जिसमे पुरुष गाँव को छोडकर शहरो में प्रवासित कर जाते है और महिलाये मूल स्थान पर ही छूट जाती है|[22]

प्रवास और महिला आकांछा–

प्रवास की प्रक्रिया में व्यक्ति अपनी सकारात्मक सोच के साथ अपने जान – पहिचान के लोगो को छोड़कर नए लोगो को बीच में जाता है| यह प्रक्रिया उस विशेष व्यक्ति की केवल सामाजिक संरचना को ही प्रभावित नही करती है बल्कि उसके सांस्कृति,मनोदशा,भावना को भी प्रभावित करती है| प्रवास का प्रभाव अत्यंत प्रबल होता है क्योकि इसमें केवल प्रवासित व्यक्ति ही नही प्रभावित होता है बल्कि वह जिस स्थान को छोड़ता है और जिस स्थान पर पहुँचता है और स्वयं वह व्यक्ति, तीनो प्रभावित होते है और उनमे कुछ ना कुछ परिवर्तन होता है यही प्रवास का समाजशास्त्र है| प्रवास अध्ययन में प्रवास की अभी तक केवल आर्थिक कारको की चर्चा की गयी है| समाज विज्ञानियों द्वारा पुरुष को परिवार का पालनकर्ता बताते हुए उनके प्रवास के कारण को तो दर्शाया है किन्तु यह नही बताया की स्त्रियों में भी प्रवास की आकांक्षा पायी जाती है और

[17] जोशी, गोपा (2011)|
[18] Mill, J.S. (1869).
[19] ब्राह्मण, भूमिहार, यादव, चमार, राजभर|
[20] यह अध्ययन प्रवास डेटा 2001 पर आधारित हैक्योकि अध्ययन के समय 2011 प्रवास का डेटा उपलब्ध नही था कितु जनसांख्यकीय संरचना 2011 के अनुसार है|
[21] Chattopadhyay, H. (1987)p. 323.
[22] इस गाँव में महिला जनसँख्या 51.12% और पुरुष जनसंख्या 48.81% है|

यदि वे मूल स्थान पर रुक रही है तो वे परिवार के भरण- पोषण के लिए पुरुष जितना ही सहयोग कर रही है| ऐसा नही है की पति के साथ पत्नी प्रवास नही करना चाहती है लेकिन हमारी सामाजिक संरचना के कारण जिसमे स्त्री की स्थिति घर के अंदर ही सीमित हो जाती है. शारीरिक रूप से प्रवास में शामिल नही होने के बावजूद स्त्रियाँ मानसिक रूप से पति के साथ प्रवासित होती है क्योंकि प्रवास करने वाले व्यक्ति की सबसे पहले जाने वाले तैयारी में वो ही शामिल होती है जब उनके पति किसी रोजगार की तलाश में बाहर काम करने जाते है[23] तो सबसे पहले महिलायें उनके जाने की तैयारी करती है अर्थात वे शारीरिक रूप से नहीं लेकिन मानसिक रूप से जरूर प्रवासित होती है और वो एक तरह से जाने वाले के लिए सपोर्ट सिस्टम का काम करती है उन्हें मानसिक रूप से दिलासा देती है की उनके जाने के बाद वो सारी जिम्मेदारियां उठा लेंगी फिर भी उन्हें प्रवास के प्रक्रिया से बाहर माना जाता है और समाजिक अध्ययनों में यह पाया गया है की गाँव में छूटी हुई स्त्रियों में गतिशीलता आई है, वो सशक्त हो रही है सामाजिक जीवन में उनकी भागेदारी बढ़ रही है, घर चलाने में वो स्वयं निर्णय ले रही है[24] और उनके जीवन में सकारात्मक बदलाव आ रहे है|[25] अगर इन अध्ययनों को जातिगत आधार पर देखा जाय तो सवर्ण और दलित दोनों समुदायों में पितृसत्ता और प्रवास का प्रभाव भिन्न भिन्न रूप से दिखाई देता है. मैंने इस अध्ययन में प्रवास से प्रभावित स्त्रियों को सवर्ण और निम्न जाति की स्त्रियों के सन्दर्भ में देखने की कोशिश की है.

[23] Hugo (2000)
[24] Gulati, L. (1893)
[25] Jetli, S. (1989), Datta & Mishra (2011)

सवर्ण महिला आकांक्षा-

हमारे धर्मो में स्त्रियों के लिए उनके जीवन जीने के तरीके और उनके जीवन के उद्देश्यों को सभी कुछ पूर्व निश्चित कर दिया गया है जैसे ईश्वर ने महिला को उनके वंश और प्रजाति को बढ़ने के लिए किया गया है|[26] इतिहास के समय से ही हम स्त्रियों के पराधीनता को देखते आ रहे है जो उसे अपने जीवन के प्रत्येक स्तर पर सहना होता है और स्त्रियों की इस स्थिति की जानकारी आसानी से उस समय लिखे गये धार्मिक ग्रंथो, मनुसमृति तथा जातक कथाओ में मिल जाता है|[27] भारतीय धार्मिक ग्रंथों में सबसे ज्यादा स्त्री विरोधी चर्चाएँ और बहसों को स्थान दिया गया है जिसे प्रत्येक व्यक्ति अपने दिन- प्रतिदिन के जीवन में धारण करता है जिसमे स्त्री की हैसियत को कमतर कर दिया है जैसे कि मनुस्मृति में कहा गया है कि महिला को बचपन में अपने पिता विवाहोपरांत पति और वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में रहना चाहिए| इसका अर्थ है कि उसे कभी भी अकेलापन नही महसूस होगा किन्तु क्या वो कभी भी अपने मन की व्यथा पिता, भाई, पति या पुत्र से कर पाती है| सत्य तो यह है कि जीवन भर उन्हें किसी का साथ नही मिल पाता जिससे वो आत्मव्यथा कह सके| परिवार की अपेक्षाओं पर खरे उतरने की कोशिश में उनकी अपनी इच्छाए और आकांक्षाये सिकुड़ती जाती है जिसके कारण वो दोहरी जिंदगी जीने को मजबूर हो जाती है|

भारतीय समाज में विवाह को स्त्री प्रवास का मुख्य सांस्कृतिक कारण माना गया है किन्तु यह प्रवास ऐच्छिक नही होता है बिना उनकी अनुमति के उनकी शादी किसी घर में तय कर दी जाती है जिससे वो अपने घर को छोड़कर पति के घर को प्रवास करती है किन्तु यहाँ भी इन्हें एक मानव पूंजी के रूप में देखा जाता है जो इस घर की तथा इसमें रहने वाले लोगो की देखभाल करेगी और यही मुख्य कारण होता है की उन्हें पति के साथ जाने की अनुमति नही मिलाती है| '***हमरे घरे में जब दुसर पतोह (बहू) आई जाई तब हमके अपने पति के साथ बाहर जाये के मिली'*** (मेरे घर में जब दुसरी बहू आ जाएगी तब मुझे शहर जाने की अनुमति मिलेगी)| ऐसी स्त्रियों को यह भी शिकायत रहती है की वो अपने ससुराल में एक अवैतनिक नौकर बन के रह गयी है, '***सास काहे के जाये दिहें उनके त फिरि क नौकर मिल गयल ह दिन भर घर क काम करा फिर शाम क उनके सेवा....अगर हम चली जायेब त के करी सारा काम'*** / समाज सास की बातों को मानने को एक अच्छी स्त्री की श्रेणी में खड़ा करता है इसलिए वो सास की बात मानने को बाध्य होती है| ऐसी स्त्रियों में पति के साथ जाने का कोई प्रबंध नही दिखाई देता है तो अपने बच्चो के शिक्षा को एक अवसर के रूप में देखती है और उसके माध्यम से वो पितृसत्ता के बन्धनों से निकलने की आकांक्षा होती है उनके अनुसार जब बच्चे की उम्र पढने लायक हो जाती है तो वे अपने पति पर बच्चो को अच्छी शिक्षा देने के लिए दबाव बनाती है क्योकि उन्हें घर से बाहर निकलने के लिए एक अवसर नजर आता है| ***"नायिहरओ क सुध भूलि गईल पियवा गईले जब परदेश|"***[28] किसी भी स्त्री के लिए उसके नईहर (मायके) से ज्यादा महत्वपूर्ण नही होता है लेकिन पति के प्रवास के समय वह अपने मायके को भी भूल जाती है| यह गीत एक महिला के द्वारा तब सुनाया गया जब मैंने उससे पुछा की क्या आप अपने पति के साथ शहर नही जाना चाहती? यह दुख मात्र इस कारण से ही नही होता क्यों की उसे उसका पति छोड़ के जा रहा होता है बल्कि इसलिए भी होता है की हमारे समाज में बिना पति के पत्नी का कोई अस्तित्व ही नही माना जाता है| पति के नही रहने पर उसे घर से बहर जाने की अनुमति नही होती है उसे आवश्यकता की सारी वस्तुएं घर में ही उपलब्ध करवा दी जाती है| सार्वजानिक जीवन से उसका कोई सम्बन्ध ही नही होता| ***पिया मत जा परदेश रहब कैसे, ससूरा के बतिया त सहि- सुनी लेबे ,सास के बतिया सहब कैसे***[29] सास के जरिये पितृसत्तात्मक कार्यो की पूर्ति होती है और वह एक एजेंट के रूप में काम करती है| लक्ष्मण प्रसाद की पुस्तक '**सास-बहु किस्सा: ज्ञान उपदेश'**[30] में अच्छी स्त्री के गुण बताये गये है, जो सास के अनुसार काम करे,बहस न करे,इस तरह से आचरण लेखको ने घर की स्त्रियों को बहुत ही रचनात्मक रूप से अलग कर दिया| सास को थोड़े अधिकार और स्वतंत्रता देकर पितृसत्ता का एजेंट बनाया जिससे पितृसत्तात्मक बंधनो को और मजबूत तथा स्त्रियों के शोषण करने में सहयोग मिलता रहे जबकि सही मायने में घर की सत्ता पुरुषो के हाथ में ही

[26] Miese, M. (1980)
[27] Uma chakrvarti (1993)
[28] फील्ड डायरी अक्टूबर (2015)
[29] Narayan,b.(2012)
[30] श्रीवास्तव, गरिमा (2014)

होती है और यही कारण है की जिन स्त्रियों के पति बाहर रहते है वो अधिकतर अपने मायके में रहना पसंद करती है|[31] पति की गैरमौजूदगी में पत्नी का सुरक्षा का अधिकार और दायित्व उसके घर के किसी अन्य पुरुष पर होता है| उन्हें घर से बाहर जाने की अनुमति भी नही होती है, जरूरत का सामान उन्हें उपलब्ध करवा दिया जाता है, महिलाओ की ऐसी दयनीय स्थिति संयुक्त परिवारों में अधिक होती है क्योकि वहां पर पुरुषो का प्रभुत्व ज्यादा रहता है| पति की गैरमोजुदगी में उन्हें जब किसी मानसिक सहारे की जरूरत होती है तो वो अपने बुजुर्गो से बात भी नहीं कर सकती है तथा पारम्परिक रूप से स्त्री के लिए अपनी भावनाओं और अकेलेपन को दिखाना शर्मपूर्ण माना जाता है क्योकि हमारी परम्परायें हमे इसकी अनुमति नही देता है और पति जब लौट कर घर आता है तो भी वह प्रत्यक्ष उनसे बात नही कर सकती उन्हें किसी न किसी व्यक्ति के माध्यम से ही वह बात करनी होती है|[32] उनकी मानसिक स्थिति दयनीय होती है एक तो पति उन्हें अपना महत्व दिखाता है कि वो घर से इतने दूर कमाने के लिए बस पत्नी की वजह से ही गया है और मुश्किल तो तब बढ़ जाती है जब पुरुष की भौतिक संस्कृति बदल जाती है क्योकि पति अब उन्हें गाँव की स्त्री के रूप में नही देखना चाहता वह अपनी पत्नी में एक शहरी महिला को तलाशने लगता है पत्नी को उसके साथ भी सामंजस्यता बैठानी पड़ती है वो पति और परिवार के बीच सामंजस्य बैठाने में असहाय महसूस करती है| सदियों से चली आ रही पितृसत्ता से स्त्री के आजादी का अभी कोई आसार नही दिखाई नही दे रहा है| हमारे शास्त्रों में पति के नही रहने पर स्त्री के दिनचर्या का भी वर्णन मिलता है कि स्त्री को किस तरह का व्यवहार करना चाहिए जब उसका पति नही होता है| प्राचीन समय में अच्छी गृहणी बनने व बनाने सम्बंधित ढेर सारी पुस्तके[33] लिखी गयी है जिनमे बताया गया है कि एक पति के घर पर न रहने पर पत्नी को बिल्कुल सजना- सवंरना नही चाहिए, अच्छे कपड़े व भोजन नही पहनने व करने चाहिए, उसके सुख दुःख पति के सुख दुःख से जुड़े होने चाहिए. इस तरह ये रुढ़िवादी आचरण स्त्रियों को अभी भी अनुसरण करने पड़ते है| प्रवास प्रक्रिया में छूटी हुई स्त्रियों को इस कर्मकांडों और रीति रिवाजो से गुजरना होता है. किसी सार्वजानिक स्थानों, त्यौहार, या शादी विवाह में उनसे फैशन की उम्मीद नही की जाती और उनसे ये भी कहा जाता है की वो क्यों तैयार हो रही उन्हें कौन देखेगा या कौन देखने वाला है स्त्री अपने पति के अनुसार जीवन जीने, कपडे पहनने के लिए बाध्य है जबकि पुरुष समाज के लिए ऐसी कोई बाध्यता नही है|

दलित महिलाओ पर प्रवास का प्रभाव-

दलित जाति की स्त्रियों में पितृसत्ता सवर्ण जाति की अपेक्षा कम पायी जाती है| लिंग भेदभाव भी सवर्ण महिलाओं की अपेक्षा कम सहना होता है क्योकि ये अपने पति पर पूरी तरह से निर्भर नही होती है आर्थिक रूप से स्वतंत्र रहती है और इनमे आत्म विश्वास भी होता है क्योकि वह आर्थिक रूप से निर्भर होती है, अपने पति का विरोध भी करती है| दलित समुदाय में परिवारिक संरचना केन्द्रीय होता है जिसमे पति-पत्नी और उनके बच्चे होते है, पति के जाने के बाद ये अकेले ही परिवार की जिम्मेदारियों का वहन करती है| इस तरह से पुरुष प्रवास के फलस्वरूप स्त्रियों के काम का बोझ भी बढ़ जाता है| ये महिलाये घर के कामो जैसे साफ़ सफाई, बच्चों की देखभाल, खाना पकाने के साथ साथ खेती और पशु-पालन सम्बन्धित कार्य भी करती है और पैसे भी कमाती है जबकि इन स्त्रियों को समझा जाता है की वो पति द्वारा भेजे हुए पैसे पर ही निर्वाह कर रही है और उसी भेजे हुए पैसे को (remmittances) को प्रमुख स्रोत माना जता है जैसा की सेन्सस और एन.एस.एस.ओ.के सर्वे में प्रवास में पति द्वारा भेजी हुये पैसे को प्रमुख आय माना जाता है जबकि भेजे हुए पैसे पर्याप्त नही होते और समय से नही आ पाते इसलिए स्त्रिया आय निर्धारित कार्य करती है और अपने परिवार के खर्च का वहन भी करती है|[34] हमारे समाज में जो रुढ़िवादी धारणायें एक स्त्री के प्रति कि वह गृहणी है अभी भी बनी हुई है| ऐसी स्त्रियों के जिंदगी में कभी भी कोई अवकाश व कोई रविवार का दिन नही होता ये चौबीस घंटे और पूरे सप्ताह भर काम पर लगी रहती है| मैंने अपने फील्ड में कई स्त्रियों की जीवन इतिहास इकट्ठा किया है जिसमे मुझे सवर्ण जाति में प्रवास के दौरान छूटी हुई स्त्रियों के जीवन में और दलित तबके की स्त्रियों के जीवन में काफी अन्तर मिलता है हालांकि दोनों तरह के स्त्रियों का शोषण होता है

[31] फील्ड सर्वे (2015)
[32] jetly.S.(1987)
[33] जगबंधु सिंह (1940)
[34] फील्ड सर्वे (2015).

लेकिन उनके तरीके अलग होते है अधिकांशत: निम्न जाति की स्त्रियाँ निरक्षर होने के बावजूद दिन भर में 100-150 रुए कमा लेती है| कुछ औरते तो अधिया[35] खेतो में भी काम करती है| इनकी पारिवारिक संरचना केंद्रीय होने के कारण खेत जाने के बाद घर के कामों की जिम्मेदारी छोटी बेटी पर आ जाती है जो अपने छोटे भाई – बहनों के लिए सेरोगेट माँ[36] की भूमिका निभाती है| उनके दिन की शुरुवात सुबह के 5 बजे से ही हो जाती है जिनमे खाना बनाने (कभी रात के बचा हुआ खाना भी खा लेते), बच्चे सँभालने,पशुओ के चारे का प्रबंध करना जैसे काम करने के बाद खेती के कार्य करती है और शाम को आने के बाद फिर सारे काम करने होते है. एक पुरुष की तरह वो अपने घर के लिए काम करती है और अपने पति की मदद भी करती है फिर भी उन्हें पैसे उधार लेने में भी दिक्कत आती है गाँव का कोई भी व्यक्ति उन्हें पैसे नही देना चाहता कि वो एक स्त्री है पैसे लौटाने में सक्षम नही है, "***औरत जाति की कौनो भरोसा ना ह,पता न पैसे लौटाई के न"|***[37] स्त्रियाँ खुद के विश्वशनीय नही माने जाने पर दुखी होती है और कहती है की "***दिन रात हम बाबू के खेतन में काम करत हइ और इ लोगन के हमरे पर भरोसे ना ह"***|[38] अकेली रहने वाली स्त्रियों को पति के साथ रहने वाली स्त्रियों की अपेक्षा प्रतिदिन की जिन्दगी के खर्चे की जद्दोजहद के साथ उन्हें सामाजिक स्तर पर भी काफी तकलीफे उठानी पड़ती है, उन्हें सरकारी योजनाओं की सुविधा लेने में ज्यादा तकलीफ उठानी पड़ती है, ग्राम प्रधान इनके अंत्योदय कार्ड, इंदिरा आवास योजनाओ के लिए इनकी बातो पर ध्यान नही देते है जिनके पति होते है उनके काम कर देते है| गर्भवती महिलाओं को पति के न रहने पर काफी तकलीफ होती है बार-बार अस्पताल तक जाने में इन्हें अपने पड़ोसियों या रिश्तेदारों को मदद लेनी होती है| प्रवास का इन स्त्रियों पर एक सकारात्मक प्रभाव देखने को मिलता है इनकी गतिशीलता बढ गयी है गाँव से बाहर काम करने भी जाती है और बाजार जाकर अपने तथा घर की जरूरतों के अनुसार खरीदारी भी कर लेती है यदि हम जाति और समुदाय के इतिहास को देखे तो पता चलता है की औरतो को गाँव के बाहर जाने को अनुमति नही रहती है यह पिछले दस वर्षो से कम हुआ है|[39] फिर भी इनकी संख्या को सार्वजनिक स्थानों पर नही देखी जा सकती| घर के कार्यों से सम्बंधित निर्णय नही ले सकती इसके लिए पति से अनुमति लेनी पड़ती है| अभी भी अपने खेत में बोये जाने वाले बीजो की नई किस्मो के बारे में उन्हें नही पता होता है क्योकि गाँव में होने वाले किसान गोष्ठियों में महिलाओं की भागेदारी नही होती है और किस सीजन में खेत में क्या बुवाई करनी है? बच्चे की शादी, खेत अधिया लेने, पैसे को कैसे खर्च करना है आदि ऐसे कामो में पति की अनुमति लेनी होती है| दुर्खीम द्वारा जो श्रम विभाजन का सिद्धांत भी असफल होता है जो पुरुष और स्त्री के मध्य संस्तरण बनाता था कि पुरुष का काम शिकार करना और महिला का काम बच्चे सम्भालना था लेकिन इन स्त्रियों को दोनों काम करना पड़ता है ये घर भी सम्भालती है और पति द्वारा भेजे हुए पैसे पर्याप्त न होने के कारण ये खेतो में भी श्रम करती है|

मूल स्थान पर छूटी हुई स्त्रियों के लिए प्रवास एक अवसर होता है कि वो अपनी अलग पहचान बना सके जैसा की थापन[40] के कथनानुसार की मनुष्य की पहचान स्थायी नही होती है वह समय, स्थान, संस्कृति के अनुसार बदलता रहता है किन्तु स्त्री अपनी समाजिक पहचान स्थापित करने में नाकामयाब रहती है क्योकि पितृसत्तात्मक व्यवस्था से मुक्त नही हो पाती उसके लिए सांस्कृतिक परम्परायें बंधन का काम करती है| अपनी पहचान के लिए सदैव पुरुष पर निर्भर रहती है पूरी जिंदगी वह किसी की पुत्री व पत्नी बनकर ही रह जाती है| यही कारण होता है की वह कल्याण कार्यक्रमों, योजनाओ से अदृश्य रहती है| अपनी जिन्दगी में विविध भूमिकाये निभाने वाली स्त्री को केवल गृहणी की भूमिका का ही पहचान मिल पाती है| अधिकतर सवर्ण स्त्रियाँ साक्षर होने के बावजूद भी घरो में बंद रहने को मजबूर होती है उनके पति उन्हें घर से बाहर निकलकर काम करने की अनुमति नही देते और सामाजिक परम्पराओं, मूल्यों और अपनी आकांक्षा के बीच संघर्ष करती है| ऐसी स्त्रियों की मानसिक स्थिति और खतरनाक होती है| ये आधुनिकता और परम्परा के बीच पिसती रहती है किसी भी परिस्थिति में इन्हें अपनी

[35] अधिया, कृषि की उस व्यवस्था को कहा जाता है जिसमे जमीन का मालिक उस पर काम करने वाले किसान को अपनी जमीन एस शर्त पर देता है कि किसान को अपनी फसल का कुछ हिस्सा मालिक को देना होगा और जमीन पर किसान का कोई कानूनी अधिकार नही होगा..

[36] Jetly, S. (1987).

[37] फील्ड सर्वे (2015).

[38] वही.

[39] Datta and Mishra (2011).

[40] Minakshi thapan (2005).

परम्परा को छोड़ने की अनुमति नही होती है क्यों कि बचपन से ही इन्हें अच्छी लड़की और बुरी लड़की[41] का पाठ सिखाया जा चुका होता है| सिमोन द बउवा का कथन सही है कि "कोई भी स्त्री जन्म से स्त्री पैदा नही होती है बल्कि बनायी जाती है", बचपन से ही लडकियों को परम्पराए, सामाजिक मूल्य, दुसरो के लिए जिंदगी बिताने की शिक्षा दी जाती है जिससे वो आगे चलकर अपने व्यक्तित्व व स्व-पहचान, समानता के लिये विरोध नही करे| उन्हें बस घर और समाज की इज्ज़त व सम्पत्ति के रूप में देखने की बजाय महसूस करने की जरूरत है| इस तरह से वो अपने ही घर में अपनी पहिचान व स्वायत्तता के लिए हमेशा संघर्ष करती रहती है|

सत्तर के दशक से शोधार्थियों द्वारा प्रवास अध्ययन में स्त्रियों को मुख्यधारा में जोड़ने का प्रयास किया गया है किन्तु अभी भी उनकी पहिचान, आकांक्षाओं, अनुभवों आदि मुद्दों पर चुप्पी है. वे प्रवास प्रक्रिया में अदृश्य है, उनकी गतिशीलता को भी नकारा गया है| मूल स्थानों पर छोड़ने के लिए उनकी छवि को सशक्त, स्वतंत्र और गतिशीलता में तब्दील कर दिया गया है उनके काम के बढ़ते बोझ, जिम्मेदारी, मानसिक दबाव, पितृसत्तात्मक रवैया को अनदेखा किया गया है| उनके गाँव में छूट जाने को स्वतंत्रता के अवसर को बढ़ावा देने वाला माना जाता है लेकिन सही मायने में यह असुरक्षित, समस्यात्मक और तनावपूर्ण होता है| ऐसी स्त्रियों का शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है क्योकि वो पारिवारिक कल्याण में भावनात्मक रूप से भी जुड़ी होती है, पति के न रहने पर परिवार की देखभाल, सुरक्षित और स्वस्थ्य वातावरण बच्चों को मुहैया कराना उनकी जिम्मेदारी होती है| पति के साथ न जाने पर उनके मन में आतिरिक्त वैवाहिक सम्बन्ध, वैवाहिक विच्छेद की भी सम्भावना बनी रहती है| दलित और सवर्ण जाति की स्त्रियों के जीवन शैली में काफी अन्तर होता है उस तरह से इनके शोषण में भी अन्तर पाया जाता है| निरक्षर होने के बावजूद भी दलित जाति की स्त्रियाँ दिन भर में 100-150 रूपये का काम कर लेती है लेकिन सवर्ण जाति की स्त्रिया स्नातक होने के बावजूद भी उन्हें काम के लिए घर से बाहर नही जाने दिया जाता है उन्हें शिक्षा इसलिए दी जाती है कि विवाह बाजार में खरी उतरे कोई पुरुष अपने घर में निरक्षर बहू नही लाना चाहता है| उनकी शिक्षा आर्थिक सहयोग में सहायक नही बनती है| सामाजिक अध्ययनों में स्त्री के कार्यो को, उसकी भूमिकाओं, आकांक्षा, अनुभवो की अनदेखी करता है और उन्हें प्रवास प्रक्रिया से अदृश्य बनाता है| प्रवास की प्रक्रिया में मार्क्स के द्वारा परिभाषित आर्थिक सम्बन्ध दिखाई देता है जिसमे बाहर जाकर पैसे कमाने वाले पुरुष को अधिक महत्त्व मिलता है और स्त्री पर यह दबाव भी रहता है कि पति को उसकी वजह से परदेश जाना पड़ रहा है उसे अपनी भावनाओं, इच्छाओं को व्यक्त कर पति को कमजोर नही बनाना चाहिए इस तरह से पूरा ध्यान पति पर देने से स्त्री की स्थिति घर में द्वितीयक होने लगती है|

समाज में स्त्री व पुरुष की भूमिकाओं को सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक गतिविधयों के अनुसार परिभाषित की गई है किन्तु हमें उनका समान अधिकार दिलाने के लिए अध्ययन करना चाहिए| सामाजिक -सांस्कृतिक मूल्यों की तरह ही स्त्री की आकांक्षायें जेंडर भूमिका से अलग होती है वह एक स्त्री होने के साथ साथ माँ,पत्नी, बहू, गृहणी, सेविका, सहायिका इत्यादि भूमिकाओ से गुजरती है और ये भूमिकाये उसके जीवन की गुणवत्ता पर भी असर डालते है क्योंकि वह स्वयं को सबसे अंतिम पायदान पर रखती है| वे बाहर काम करने जाती है तो घर के सारे काम करने के बाद ही जाती है इन सबके बावजूद भी वह परिवार की पालनकर्ता नही मानी जाती, उसकी कोई पहिचान नही होती, सदैव किसी पुरूष छाया की जरूरत पड़ती है|

Bibliography

- A. S. Oberai and H. K. Manmohan . (1983). *Causes and Consiquences of Internal Migration* . Delhi : Oxford Universty Press.
- Altaker, A. (1956). *The Position of Women in Hindu Civilisation.* Banaras : Motilal and Banarasidas.
- Amrita Datta and Sunil Kumar Mishra. (2001). Glimpses of Women lives in Rural Bihar . *Jaurnal of Labour Economics* , 457-77.

[41] गरिमा श्रीवास्तव (2014) पृष्ठ 683- 709.

- Beasley, C. (2005). *Gender and Sexuality.* New Delhi : Sage Publication.
- Brown, B. B. (1983). The Impact of Male Labour Migration on Women in Botswana . *African Affairs 82 (328)* , 367-388.
- Chakravarti, U. (1993). Conceptualising Brhmanical Patriarchy in Early India . *Economic and Political weekly* , 579-85.
- Chattopadhyay, H. (1987). *Interal Migration in India.* Culcutta and Delhi : K.P. Bagchi and company.
- D. Massey, . Joaquin Arango, Grame Hugo, Ali Kouaouci, Adela Pellegrino and Edword Taylor. (1993). Thories of International Migration . *Population and Development Review 19(3)* , 431-66.
- Gulati, L. (1987). Coping with Male Migration. *Economic and Political Weekly* , 41-46.
- Gulati, L. (1993). *In the Absence of Their Men: Impact of Male Migration on Women.* New Delhi : Sage Publication.
- H. Presser and G. Sen. (2000). Women Empowerment and Demographic Process: Moving Beyond Cairo. In G. Hugo, *Migration and Women Empowerment* (pp. 287-317). New York: Oxford University Press.
- Hicks, J. R. (1962). *Theory of Wages.* Macmillian : London
- Jetly, S. (1987). Impact of male migration on rural female. *Economic and Politicale Weekly 22 (44)* , 47-53.
- Kanaiaupuni, S. M. (2000). Refreming the Migration Question: An Analysis of Men, Women Genderin Maxico. *Social Forces 78 (4)* , 1311-47.
- Lernar, G. (1986). *Creation of Patriarchy* . New York : Oxford University press.
- Menon, N. (2012). *Seeing Like A Feminist* . Delhi : Peguine books.
- Mies, M. (1980). *Indian Women and Patriarchy* . New Delhi: Concept Publishing Company.
- Narayan, B. (2012). supression, Emotion and History: A Study of Bedeshiya Bhav in Indentured Migration. *Man in India 92(2)* , 281-297.
- Oded Stark and David E. Bloom . (1985). The New Economics of Labour Migration. *The Amarican Econoic Review vol.75 (2)* , 173-78.
- Rao, N. (2012). Breadwiners and Homemakers: Migration and changing conjugal expectation in rural Bangladesh. *Jaurnal of development studies 48(1)* , 26-40.
- Rao, N. (2012). Male Providers and female houswives: A genderd co-performence in rural north India . *Deveopment and change 43(5)* , 1025-48.
- Revenstien. (1889). The Law of Migration . *Jaurnal of Royal Statistical Society vol.52,* 241-305..

- Sonal Desai and Manjistha Bannerji. (2008). Negotiate Identity:Male Migration and Left Behind Wives in India. *Jaurnal of Population Research* , 337-355.
- Thapan, M. (2005). *Transitional Migration and Politics of Identity* . New Delhi: Sage Publication.
- Tinker. (1974). *New System of Slavey: The Export of Indian Labour Overseas 1830-1920.* London : Oxford University Press for Institute of Race Relation.

हिंदी संदर्भ -

- गुरु, जी. (2013). अनुभव स्थान और न्याय. प्रतिमान, समाज और संस्कृति (वर्ष 1, खंड 1 , अंक 2) सी. एस. डी.एस. वाणी प्रकाशन, दिल्ली. 531-556.
- जोशी, जी. (2011). भारत में स्त्री असमानता. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय.
- मिल, जे. एस. (1869) सब्जेक्शन ऑफ़ वीमेन. अनुवादक युगांक धीर. मुंबई: मेरठ संवाद प्रकाशन.
- सिंह, जे. (1940) गृहलक्ष्मी, भाग 1 प्र. सं. कटक ट्रेडिंग कम्पनी.
- श्रीवास्तव, गरिमा. (2014). नवजागरण स्त्री प्रश्न और आचरण पुस्तकें. प्रतिमान समाज और संस्कृति (वर्ष 2, खंड 2, अंक 2) सी. एस. डी. एस. वाणी प्रकाशन . 683-709.